अध्याय
3

बन्दी पिता का पत्र

पंडित कमलापति त्रिपाठी

नैनी सैंट्रल जेल

प्रिय लालजी

आज जेल में होली का उत्सव मनाया जा रहा है । मेरे कानों में अभी-अभी मंद किंतु उल्लासभरी स्वर लहरी टकराई है जो कहीं पास के बैरक से प्रवाहित हो रही है। इन कैदियों के जीवन में आनंद, सुख और संतोष के लिए स्थान कहाँ है? जो पशुओं की तरह पीसे जाते हैं, जो समाज से उपेक्षित हैं, जिनके लिए जगत में कहीं सम्मानपूर्वक खड़ा होने का स्थान नहीं, जिनका भविष्य अंधकार में है और जिनमें बहुतों के जीवन के अनेक वर्ष यहीं समाधिस्थ हो गए, और जिनकी सूखी हुई हड्डियाँ और चिचुके चाम भी संभवत: यहीं गलपच जाएँगे, उनके लिए कहाँ है वसंत और कहाँ है सावन का मेघगर्जन? यहाँ ऐसे प्राणी है जिनकी सारी जवानी इसी में कट गई, बुढ़ापा यहीं आ गया और अब मौत भी संभवत: यहीं आकर उन्हें बंधनमुक्त करेगी। ऐसे लोगों की संख्या भी बहुत है जिन्हें यह भी पता नहीं कि उनके घर की क्या दशा है, अपने जिन बच्चों को वे छोड़ आए थे वे अब कैसे हैं। उनके घरवाले भी उन्हें भूल चुके हैं। वे यदि आज कहीं छूट कर जाएँ और अपने सौभाग्य से अपने बेटों से मिलें और अपनी बीबी के सामने खड़े हों तो शायद न बेटा बाप को पहचानेगा और न ही बीबी अपने मियाँ को। क्या कभी कोई इसकी कल्पना भी कर सकता है, कि इनके हृदय में भी रस का संचार होना संभव है? क्या होली ,क्या दीवाली किसी में यह सामर्थ्य कहाँ हो सकती है कि इनके हृदय के टूटे हुए तारों को जोड़ कर पुन: झंकृत कर दे।

पर लीलामय की महानटी प्रकृति ने मनुष्य को विचित्र प्राणी बनाया है। देखता हूँ कि मानव में सुख-दु:ख में सामंजस्य स्थापित कर लेने की अद्‌भुत क्षमता होती है। परिस्थिति उपस्थित होने पर किस सरलता के साथ वह अपने को उसके अनुकूल बना लेता है। उसके हृदय में स्वभावत: कितनी कला,कितना संतुलन और कितना धैर्य भरा पड़ा है। कदाचित् मनुष्य में यदि इसकी क्षमता न होती तो वह एक क्षण के लिए भी जीवन धारण करने में समर्थ न होता। मुझे तो ऐसा लगता है कि जगती अनंत दु:ख और वेदना से ही परिपूर्ण है। प्रबल वेगवान महान कालनद के स्तर पर बुलबुले के समान अकस्मात् प्रकट हुए इस जीवन के अस्थायी अस्तित्व पर जरा ऊँचे उठ कर दृष्टिपात करता हूँ तो सोचने लगता हूँ कि उसके कितने क्षण सुख और शांति में बीते हैं। मैं तो यदि खुद दूरबीन भी लेकर खोजने की चेष्टा करता हूँ तो मुझे सुख,आनन्द और तृप्ति नाम का पदार्थ कहीं ढूँढे भी मिलता दिखाई नहीं देता । छोटे से इस जीवन का अधिकतर भाग वेदना और पीड़ा में ही डूबा दिखाई देता है । हाँ, सुख के क्षण कभी-कभी आ जाते हैं। जो बिजली की भाँति चमक कर अंधकाराच्छन्न पथ पर आलोक की आभा फेंक कर मानो लुप्त हो जाते हैं। वह सुख नश्वर होता है , क्षणिक होता है, पर वे क्षण सत्य होते हैं जो जीवन में अपनी अमिट स्मृति छोड़ जाते हैं। यही स्मृति जीवन की शक्ति का स्रोत होती है। यही स्मृति निराशा में आशा ,अंधकार में प्रकाश और मृत्यु तथा विनाश में जीवन और निर्माण का आधार बनी रहती है।

मानव स्वभाव की यह विशेषता उसकी सबसे बड़ी विभूति है । उसी के बल पर भूख और यातना से पीड़ित, किसी सुदूर और उपेक्षित गाँव की झोंपड़ी में पड़ा हुआ किसान ,जब दिन भर परिश्रम करने के बाद सायंकाल अपने बाल-बच्चों में आता है, और अपने हुक्के की निगाली मुँह में डालकर गुड़गुड़ शब्द करते हुए हृदय की आह धुएँ के साथ बाहर निकालता है , तब उसी में उस सुख और तृप्ति का अनुभव करता है। यही विशेषता मनुष्य को मंगल मनाने का

उत्साह प्रदान करती है। किसका जीवन है जो दु:खों से आकीर्ण न हो, समाज का कौन सा अंग है जो अतृप्ति और अभाव का अनुभव न करता हो? फिर भी मनुष्य को इसी जीवन और इसी जगत् से इतना मोह होता है । चलते हुए पारे के बिखेरे कन के समान छिटके हुए सुख के क्षणों को बटोर लेने के असंभव प्रयास में जीवन कितने दुख ,कितनी वेदना और कितनी यातनाओं का भार सहन करने के लिए तैयार हो जाता है, यह देख कर क्या आश्चर्य नहीं होता? पर आश्चर्यमयी तो यह दुनिया है ही। फलत: कैदियों को होली के उत्साह में मस्त देख रहा हूँ । उन्होनें डफली बनाई है, घुँघरू बनाए हैं और फटे-पुराने चिथड़ों को एकत्र कर उन्हे रंगा है। अपनी बैरकों से बाहर निकलकर वे स्वाँग रच रहे हैं, फगुआ गा रहे हैं और कोई-कोई घुँघरू पहन कर नाच रहे हैं। इन अभागे बंदियों का उल्लास और उन्माद दर्शनीय है। स्वतंत्र वायु और निर्मुक्त अनंत आकाश से भी वंचित होकर ये जीवन को कुछ क्षण के लिए मोहक और आकर्षक बनाने में सफल हुए हैं। आज होली न आई होती तो इन्हें इतना भी नसीब न हुआ होता। त्योहारों की ऐसी उपयोगिता का पहले कभी आभास भी मुझे नहीं मिला था। होली के साथ न जाने कितना इतिहास जुड़ा हुआ है? मैंने कहीं पढ़ा था कि हजारों वर्ष पूर्व वैदिक युग मे आर्य बड़े उत्साह और धूमधाम से बसंतोत्सव मनाया करते थे। इन उत्सवों को समन कहा जाता था जिसका उल्लेख और वर्णन वेदों में मिलता है। खेल-कूद, नाच-रंग ,नाटक,घुड़दौड़ ,रथों की दौड़ आदि तरह तरह के उत्सवों में स्त्री-पुरुष सब भाग लेते, दिन-रात खेल तमाशे हुआ करते और कई दिनों तक होते रहते। वेदों में इस उत्सव के आकर्षक वर्णन मिलते हैं। पुरातन आर्यो में स्त्रियों को बड़ी स्वतंत्रता थी। उस समय युवती कन्या स्वयं अपने पति का वरण कर लेती थी। कहते हैं, इन उत्सवों में ऐसे स्वयंवर बहुत होते थे। लड़के, लड़की परस्पर मिलते और उनमें से जो विवाह बंधन में आबद्ध होना चाहते उनके माता -पिता उनकी इच्छानुसार वही कर देते। समनोत्सवों की यही बड़ी भारी उपयोगिता थी। न जाने कितनों के जीवन और हृदय का सम्मिलन कराने का पुण्य इस समन को प्राप्त हुआ होगा।

हमारा होलिकोत्सव शायद उस प्राचीन समनोत्सव का ही विकसित रूप है। हजारों वर्षों से होने वाले इस उत्सव के साथ न जाने कितनों के हृदय का उल्लास ,उनकी कामना ,उनकी मधुर कल्पना और उनकी भावुकता मिली हुई है। न जाने कितनों के जीवन में इसने किसी कोमल स्मृति की वह चिनगारी जला कर छोड़ दी है जो अपनी अखंड ज्योति से उसे सतत दीप्त करती रहती है। यमुना के तट पर मनोहर निकुंजों में श्याम ने गोपिकाओं के साथ होली खेली थी। सहस्त्राब्दियों पूर्व वहाँ जो रसधारा प्रवाहित हुई थी वह आज तक सूखी नहीं और कदाचित् तब तक न सूखेगी जब तक मनुष्य, मनुष्य है। उस चिरंतन रसधारा का उद्गम है, मनुष्य का हृदय और उसकी अनुभूतियाँ, जो आज भी श्याम के होलिकोत्सव की गाथा में अपने ही प्रतिबिंब का दर्शन करती है। होली की यह महत्ता तो मैं समझता था पर आज उसकी जो उपयोगिता दिखाई दी, उसकी कल्पना भी पहले कभी नहीं की। इन आबद्ध प्राणियों को थोड़ी देर के लिए उसने बंधनमुक्त करके अपनी सार्थकता सिद्ध कर दी है। मेरी आँखों के सामने मैदान में उन्होने धूम मचा रखी है। मालूम होता है कि वेग से बहती नदी का बाँध जैसे टूट गया हो। उनके ज्ञान में न वेदना का राग है, और न नृत्य और अभिनय में उदासीनता की काली छाया। बंधनयुक्त जीवन मे कल्पित स्वतंत्रता का यह क्षण क्या उनके लिए सत्य नहीं है? कौन उसे असत्य कहने का साहस करेगा? फिर कैदियों का झूमड़ झूम-झूम कर इस सत्यासत्य मिश्रित जीवन का उपभोग क्यों न करें?

ब्रिटेन की साम्राज्यवादिनी सरकार की निष्ठुरता हृदय में आग लगाए हुए थी। अपनी असह्य अवस्था झुंझलाहट पैदा कर रही थी और इस महान देश के करोड़ों नर-नारियों की नपुंसकता लज्जा का उद्रेक कर रही थी। हम लोग सोचते कि गांधीजी विकट संकट में फँस गए। वे उन लोगों में है जो अपनी प्रतिज्ञा से डिगना नहीं जानते, चाहे शरीर के टुकड़े-टुकड़े क्यों न उड़ जाए। उनमें विदेहत्व का आदर्श सजीव रूप में मूर्तिवान हो चुका है। आदर्श और सत्य के लिए उस व्यक्ति की दृष्टि में न जीवन का कोई मूल्य है और न जगत का। पर दूसरी ओर स्वार्थ में अंधे हुए कठोर हृदय साम्राज्यवादियों की सत्ता देखी, जिनमें नर रक्तपान करते-करते मनुष्यता नाम के किसी पदार्थ की छाया भी नहीं रह गई है। भय होता, भय नहीं विश्वास था कि यदि कहीं वह अशिव मुहूर्त आ ही गया जब गांधीजी की भौतिक देह इस तप

के बोझ को सहन करने में असमर्थ होती दिखाई देगी तो उस समय भी वे मानवता की इस विभूति और पृथ्वी के इस अमूल्य रत्न को नष्ट कर देने में आगा-पीछा न करेंगें । आखिर वे तो मनुष्य ही थे। जिन्होंने ईसा के तप:पूत शरीर मे लोहे की कील ठोककर प्रसन्नता और संतोष प्राप्त किया था। यदि इतिहास उसी की पुनरावृत्ति करे तो उसे कौन रोक सकेगा?

हम अनुभव कर रहे थे कि आज गांधी नहीं मर रहा हैं बल्कि उनके साथ वह आदर्श और वह सत्य मर रहा है जिस का प्रतिनिधित्व वह कर रहा है और जिसका दिव्य संदेश लेकर यह देवदूत अवनि पर अवतीर्ण हुआ है। प्रश्न उठता है कि क्या मानव के चरम कल्याण की इच्छा और उसके लिए चेष्टा करना ही कोई जघन्य अपराध है जिसके लिए इतना भयानक दंड मिल रहा है। यदि मानव समाज को संहार से ,विनाश से और पाप से बचाना है तो उसकी समस्त व्यवस्था को अहिंसा के आधार पर स्थापित करने का आयोजन करना ही होगा। लोग कह देते हैं कि अहिंसा मानव -प्रवृत्ति के प्रतिकूल है और कभी हिंसा का उन्मूलन संभव नहीं है। वे इतिहास को साक्षी रूप में उद्धृत करते हैं। पर मैं समझता हूँ कि लोग उसी इतिहास को गलत ढंग से देखते है। वे यह नहीं देखते कि विकास पथ का पथिक मानव सदा आरंभिक प्रवृत्तियों से युद्ध करता ,उनका संयम और नियंत्रण करता ही आगे बढ़ता चला गया है। उसकी यही साधना संस्कृतियों को जन्म देती रही है।

विचार करो तो देखोगे कि मानवता का इतिहास इस परम साधना का ही इतिहास है। सहज प्रवृत्तियों का उन्मूलन मनुष्य नहीं कर सकता पर उन प्रवृत्तियों को व्यवस्थित करना, उन पर कला का रंग चढ़ाना ,उन्हें नियंत्रित करना , उनकी धारा को अधिक उन्नत पथ की ओर मोड़ना और उसे सुसंयमित करना न केवल उसकी शक्ति में है बल्कि इसी का प्रयास वह सदा से करता रहा है। समाज की रचना इसी प्रयास का परिणाम है। संस्कृतियों का विकास इसी तपस्या का फल है। फलता हिंसा और स्वार्थ का उन्मूलन भले ही न हो पर उस दिशा की ओर तो मनुष्य बढ़ता ही जाएगा। जैसे हिंसा उसकी सहज प्रवृत्ति है वैसे ही उसके संयम करने की प्रवृत्ति भी प्रकृति ने सहज ही उसे प्रदान की है। मानव का यह द्वंद्वात्मक स्वरूप ही उसकी विशेषता है। गांधी जैसा व्यक्ति उसी की ओर संकेत करता है। आज उसकी असफलता न केवल भारत के लिए बल्कि समस्त मानव-समाज के लिए अभिशाप के सदृश होगी । वह असफलता गांधीजी की असफलता नहीं बल्कि मानवता की पुनीत साधना की असफलता होगी। वह होगा उसके विकास पथ का अवरोधन ,जो उसकी गति को रूद्ध कर देगा। फिर तो गतिहीन मानव न केवल अपने प्रयोजनों से भ्रष्ट होगा बल्कि विनाश के मुख में साथ जाएगा। हम इसी दृष्टि से इस समस्या पर विचार कर रहे थे और निराश हो रहे थे। उन इक्कीस दिनों की अपनी आंतरिक वेदना का क्या वर्णन करें। आज गांधी की हालत खराब है, डॉक्टर उनके जीवन से निराश हो रहे हैं आदि समाचार सुन-सुन कर कलेजा फट जाता।

इस स्थिति मे आज उनका विशेष मूल्य तुम्हारे लिए नहीं हो सकता, यह अच्छी तरह जानता हूँ। पर उन विचारों में किसी की अनुभूति घुली मिली है। किसी दिन वे तुम्हारी समझ मे अवश्य आएँगें , यह भी मेरा विश्वास है कि जब मन में आता है तब पुन: लिखने की इच्छा होने लगती है और मन में भाव उठता है कि यह बिल्कुल अकारण और व्यर्थ नहीं है । फिर मुझे तो संतोष हो जाता है और मेरा समय कट जाता है वह ऊपर से एक बात और लिख दूँ । मैं समझता हूँ कि इन पत्रों का लिखने के लिए मैंने तुम्हारा संबोधन अवश्य किया है पर जब अंतर में प्रवेश करके देखता हूँ तब ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तव में पत्र लिख रहा हूँ - अपने को ही । कदाचित् मनुष्य जो भी लिखता है सब अपने को ही लिखता है, फिर संबोधन चाहे जिसका करे। अपनी ही भावना अपने ही विचार ,अपनी कल्पना की अभिव्यक्ति अपने लिए ही करता है, जिन पर उसी के अंत: करण की छाप लगी रहती हैं। ऊपर से वह चाहे जिसे अपने सम्मुख रखकर अपने लिखने का पात्र बनाए, पर भीतर अपने अवचेतन मन में वह स्वयं ही आसीन रहता है। अत: यह कहना अनुचित न होगा कि ये पत्र केवल तुम्हारे लिए नहीं,प्रत्युत मेरे लिए भी लिखे गए हैं और हम दोनों का इससे कुछ प्रयोजन भी सिद्ध हो सकता है।

जीवन में जो अनुभूतियाँ मुझे हुई हैं और जिन समस्याओं के चक्र से मुझे पार होना पड़ा है ,वैसी अनुभूतियाँ और समस्याएँ तुम्हारे जीवन में भी उपस्थित हो सकती हैं। उनका जो प्रभाव मेरे ऊपर हुआ है वही प्रभाव तुम्हारे ऊपर भी हो सकता है। जीवन का जो स्वरूप मेरी समझ में अपने अनुभव और प्रेक्षण से आया है कुछ वैसा ही आभास समय आने पर तुम्हें भी हो, पर मेरे कथन का यह तात्पर्य नहीं कि ऐसा होना अनिवार्य ही है। जगत के अनेक प्राणियों मे जीवन विभिन्न है, उनका अलग व्यक्तित्व है और उनकी अलग-अलग अनुभूतियाँ होती है। यह आवश्यक नहीं कि सब लोग संसार को एक ही दृष्टिकोण से देखें । मै तो मानता हूँ कि जितने मुंड हैं उतने ही दृष्टिकोण भी हो सकते हैं,उतनी ही विभिन्न प्रकार की अनुभूतियाँ। पर ऐसा होते हुए भी मेरी समझ में यह आता है कि विभिन्नतामय इस दृश्य जगत के मूल में किसी प्रकार की अभिन्न धारा अवश्य प्रवाहित है जो अदृश्य होते हुए भी सबको एक सूत्र मे पिरोए हुए है।

इस प्रकार तुम्हारे संबंध मे विचार करते हुए आज मैं तुम्हारे बहुत निकट पहुँच गया हूँ । मेरे मस्तिष्क में विचारों का जंगल सा उठ खड़ा हुआ है। बहुत सी बात इसी सिलसिले में मन में उठ रही है, उन्हें लिख डालना चाहता हूँ पर देखता हूँ कि पत्र का कलेवर बहुत बढ़ गया है।फलत: इसे तो यहीं समाप्त करता हूँ किन्तु दूसरे का आरंभ भी तत्काल कर दूँगा। अवश्य ही वह आरंभ कल होगा । आज उन विचारों को लेकर ही शयन करूँगा। विश्राम के बाद समझता हूँ कि विचारों का प्रकटीकरण भी अधिक व्यवस्थित ढंग से हो सकेगा

तुम्हारा बाबू

अभ्यास

1. बन्दी पिता का पत्र किसने, किसे संबोधित कर लिखा है?
2. पत्र में कैदियों के जीवन के विषय में किन-किन बातों का उल्लेख किया है?
3. जीवन के सुख-दुख से संबंधित विचारों को लेखक किस प्रकार व्यक्त किया है?
4. पत्र लेखक ने अपने पत्र में गांधीजी के सत्याग्रह के विषय में क्या लिखा है?
5. कैदियों ने होली के उत्सव को किस प्रकार मनाया था?
6. ब्रिटेन की सरकार की मनमानी से लेखक को क्यों क्षोभ हुआ?
7. इस पत्र के माध्यम से लेखक क्या कहना चाहता है? स्पष्ट कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' अपने विद्यालय के पुस्तकालय से प्राप्त करके पढ़िए।
2. जेल में लिखी जाने वाली पुस्तकों के नामों की सूची बनाइए। उनके विषय मे कक्षा में चर्चा कीजिए।
3. इस पाठ के विषय मे अपने मित्र से चर्चा करते हुए एक पत्र लिखिए।
4. पंडित कमलापति त्रिपाठी स्वतन्त्रता आन्दोलन के सैनिक के साथ-साथ प्रतिष्ठित पत्रकार तथा प्रमुख राजनयिक रहे हैं। त्रिपाठी जी उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद पर भी आसीन रहे हैं। पं. कमलापति त्रिपाठी की बापू और मानवता, बापू और भारत, बन्दी की चेतना, पत्र और पत्रकार आदि रचनाओं से स्वतंत्रता- संग्राम आन्दोलन के महत्वपूर्ण अंशों का संकलन कीजिए।

* * *